Anusandhanvallari
Vol 2025, No.1
December 2025
ISSN 2229-3388

वर्तमान परिस्थितियों में भगत सिंह की वैचारिकता के महत्व का एक अध्ययन

[1]Devendra Singh, [2]Dr. Sagufta parveen

[1]शोधार्थी, विषय इतिहास

[2](Supervisor)

Department of Arts Faculty of Humanities Mangalayatan University, Beswan Aligarh

सारांश, साण्डर्स की हत्या ने भगत सिंह, राजगुरु, सुखदेव को दी क्रांतिकारी की पहचान 17 दिसंबर 1928 को करीब सवा चार बजे एएसपी सॉण्डर्स के आते ही राजगुरु ने एक गोली सीधी उसके सर में मारी जिसके तुरन्त बाद वह होश खो बैठे। इसके बाद भगत सिंह ने तीन–चार गोली दागकर उसके मरने का पूरा इन्तजाम कर दिया। ये दोनों जैसे ही भागने लगे कि एक सिपाही चनन सिंह ने इनका पीछा करना शुरू कर दिया। चन्द्रशेखर आजाद ने उसे सावधान किया और कहा – आगे बढ़े तो गोली मार दूँगा। नहीं मानने पर आजाद ने उसे गोली मार दी। क्रांतिकारियों ने साण्डर्स को मारकर लालाजी की मौत का बदला लिया। साण्डर्स की हत्या ने भगत सिंह, राजगुरु, सुखदेव को पूरे देश में एक क्रांतिकारी की पहचान दिला दी। इस घटना के बाद अंग्रेजी सरकार बुरी तरह बौखला गई। हालात ऐसे हो गए कि सिख होने के बाद भी भगत सिंह को केश और दाढ़ी काटनी पड़ी। सन् 1929 में जेल में कैदियों के साथ अमानवीय व्यवहार किये जाने के विरोध में राजनीतिक बन्दियों द्वारा की गयी व्यापक हड़ताल में बढ़–चढ़कर भाग भी लिया। चन्द्रशेखर आजाद ने छाया की भाँति इन तीनों को सामरिक सुरक्षा प्रदान की थी। उन्हीं दिनों अंग्रेज सरकार दिल्ली की असेंबली में पब्लिक 'सेफ्टी बिल' और 'ट्रेड डिस्प्यूट्स बिल' लाने की तैयारी में थी। यह बहुत ही दमनकारी कानून था और सरकार इन्हें पास करने का फैसला कर चुकी थी। शासकों का इस बिल को कानून बनाने के पीछे उद्देश्य था कि जनता में क्रांति का जो बीज पनप रहा है उसे अंकुरित होने से पहले ही समाप्त कर दिया जाए। जब भगत सिंह ने बम फेंका बम लेकिन चंद्रशेखर आजाद और उनके साथियों को यह हरगिज मंजूर नहीं था। उन्होंने निर्णय लिया कि वह इसके विरोध में संसद में एक धमाका करेंगे जिससे बहरी हो चुकी अंग्रेज सरकार को उनकी आवाज सुनाई दे। इस काम के लिए भगतसिंह के साथ बटुकेश्वर दत्त को कार्य सौंपा गया। आठ अप्रैल 1929 के दिन जैसे ही बिल संबंधी घोषणा की गई तभी भगत सिंह ने बम फेंक दिया।

मुख्य शब्द, भगत सिंह, चन्द्रशेखर आजाद, राजगुरु, सुखदेव आदि।

परिचय, भारत की राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक पृष्ठभूमि को प्रथम भारतीय स्वतंत्रता संग्राम अर्थात 1857 के विद्रोह से लेकर भारत के विभिन्न भागों में नए क्रांतिकारी समूहों की स्थापना के काल तक देखा जा सकता है, जिन्होंने अंतिम लक्ष्य अर्थात लोगों की स्वतंत्रता को प्राप्त करने के लिए आगे संघर्ष किया। लेकिन यह एक दिन में सर्वोच्च उपलब्धि प्राप्त करने का कार्य नहीं था।

1857 के विद्रोह ने सभी स्वतंत्रता सेनानियों को संघर्ष की शुरुआत करने के लिए सीमा पर खड़ा कर दिया, तथा इस युद्ध के बाद की घटनाओं ने उन हिंसक समूहों को स्थापित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई, जिन्होंने स्वतंत्रता के लिए बहुत संघर्ष किया। दूसरे शब्दों में इस विद्रोह के दमन ने युवाओं के मन में असंतोष पैदा किया, क्योंकि क्रोध की आग उनके दिलों में सुलगती रही।[1] कुछ लोगों ने तो यह भी सोचा कि हिंसक तरीके से लड़ना बेकार है, लेकिन कुछ अन्य लोगों की गतिविधियों ने देश के माहौल को राजनीतिक संगठन और पत्रकारिता के उद्यम के साथ विकसित कर दिया। मुख्य मुद्दा स्वतंत्रता प्राप्त करना था, न कि इसे लेने का तरीका। आज हम यह नहीं कह सकते कि भारत को आजादी सिर्फ क्रांति के तरीके से मिली। लैकिन ऐतिहासिक घटनाओं पर नजर डालें तो हम समझ सकते हैं कि हिंसक कार्रवाईयों और शांतिपूर्ण गतिविधियों ने भी इसमें योगदान दिया। आजादी की लड़ाई के सभी तरीके आपस में जुड़े हुए हैं। हम उन्हें अलग–अलग नहीं कर सकते। आर्थिक, राजनीतिक और सामाजिक स्वायत्तता के लिए भारतीय लोगों की

क्रांतिकारी सशस्त्र सेना। हम यह भी कह सकते हैं कि ब्रिटिश नीतियाँ भारत की अर्थव्यवस्था और शांति के पक्ष में नहीं थीं।

1857 के विद्रोह के एक साल बाद यानी 1858 में लोगों को यह ऐहसास होने लगा कि विकास साम्राज्य के विभिन्न भागों में विकास के बावजूद, भारत एकमात्र ऐसा क्षेत्र था जो गरीबी और संकट का प्रतीक था। सच तो यह था कि ब्रिटिश सत्ता स्थापना की प्रक्रिया का अंत सभी भारतीय स्रोतों के लुप्त होने के साथ हुआ। इसके अलावा, बर्मा, अफगानिस्तान, नेपाल के खिलाफ ब्रिटिश सरकार द्वारा लड़े गए युद्धों ने भारत पर खर्चों का भारी कर्ज डाल दिया। सैन्य खर्चों पर विचार न करते हुए, अंग्रेज पूरी जिम्मेदारी भारत की बढ़ती जनसंख्या पर डाल रहे थे। इसके अलावा भारतीयों के प्रति अंग्रेजों का व्यवहार बहुत ही असभ्य और परेशान करने वाला था। कभी–कभी तो यह नस्लीय भेदभाव से आगे बढ़कर पशु–व्यवहार तक पहुंच जाता था। अंग्रेजों द्वारा हमारे लोगों पर इस तरह का व्यवहार और क्रूर हमलों का लंबा सिलसिला, जिसे समझा जा सकता है, बर्दाश्त करने योग्य नहीं था बल्कि उबाने वाला था और लोगों के दिलों में कभी न खत्म होने वाली आग पैदा कर गया। दादा भाई नरोजी, आर.सी. दत्त और बिपिन चंद्र पाल (न्यू इंडिया साप्ताहिक से) ने भारत और भारतीय किसानों के आर्थिक पतन के एक ही मुद्दे पर विरोधाभासी तर्क दिए, जो इसकी आबादी का बहुमत थे क्योंकि ब्रिटिश शासकों की कुछ भूमि प्रणाली ने उन्हें और अधिक गरीब बना दिया और साम्राज्यवादी लाभ को अधिकतम किया।

ऊर्जा का ऐसा ह्रास शासकों द्वारा शासितों को दिए जाने वाले कम–श्रम–मजदूरी के कारण हो रहा था। दादाभाई नौरोजी ने 1900 में देखा और कहा, कि भारतीय मूल निवासी या मजदूर अमेरिकी गुलामों से भी बदतर थे। जबकि, डॉ. आर.सी. दत्त ने अंग्रेजों की राजस्व प्रणाली की पूरी सच्चाई को उजागर किया जो किसानों को गरीबी और भुखमरी में डालने के लिए जिम्मेदार थी। इसलिए, क्रांतिकारी गतिविधियों ने रोटी से लेकर स्वतंत्र जीवन और स्वतंत्रता प्राप्त करने की लड़ाई की मिट्टी पर बिछना शुरू कर दिया। जैसा कि एक बंगाली अखबार ने भारतीय लोगों की स्थिति के बारे में अपने विचार इन शब्दों में प्रकट किए– उसने अपनी जीवन शक्ति खो दी, उसने अपना सार खो दिया, उसका जीवन रक्त ही सूख गया है, और वह केवल हड्डियों का बना हुआ है। वह आधा खाया हुआ है, वह आधा कपड़े पहने हुए है।[2]

1897 में पूना की प्लेग महामारी को अंग्रेजों के अत्याचार के खिलाफ हिंसक कार्रवाई की ओर पहला कदम माना जा सकता है। श्री रैंड, अंग्रेज को कुछ सशस्त्र सैनिकों के साथ संक्रमित घरों को बलपूर्वक खाली करने के लिए नियुक्त किया गया था। लोगों को उनकी आवश्यक चीजों के बिना उनके स्थानों से बाहर निकालने के उनके हमलावर तरीके ने लोगों को आतंकित और क्रोधित कर दिया। श्री रैंड उनकी नजरों में एक असभ्य व्यक्ति बन गए। सैनिकों ने लोगों को बलपूर्वक उनके घरों से निकाल कर, उन्हें पृथक शिविरों में डाल दिया, जिससे उनके घर और दुकानें असुरक्षित हो गईं और संपत्ति की सुरक्षा के बिना खुल गईं। लोगों की शिकायत को सरकारी कर्तव्यों के प्रति एक अमूर्तता के रूप में लिया गया।

महान भारतीय वक्ता श्री लोकमान्य तिलक ने प्लेग को नियंत्रित करने के बहाने लोगों के साथ इस अत्याचार के खिलाफ अपने समाचार पत्र केसरी में लिखा। उन्होंने ब्रिटिश भारतीय सरकार और श्री रैंड पर इस तरह के अत्याचारों का आरोप लगाया। भारतीय नेताओं ने अंग्रेजी सरकार की क्रूरता पर अपने विचार व्यक्त करने के लिए अपने कारण उत्सवों को एक मंच के रूप में लिया। शिवाजी की स्मृति में इस प्रकार के उत्सवों में, 1897 में तिलक ने अपना भाषण दिया और शिवाजी द्वारा आगा खान की हत्या को उचित ठहराया। उन्होंने महाभारत के उदाहरण दिए, जिसमें भगवान कृष्ण ने अच्छे कारण के लिए अपने गुरु या रिश्तेदार की हत्या को उचित ठहराया। तिलक ने कहा कि उन्हें अपने विचारों को कुएं के मेंढक की तरह सीमित नहीं करना चाहिए, बल्कि इसे किसी सीमा से बाहर निकालना चाहिए।[3]

ऐसी पृष्ठभूमि के समर्थन से चापेकर बंधुओं ने 22 जून 1897 को मिस्टर रैंड की हत्या कर दी। उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया और मृत्यु तक फाँसी पर लटकाया गया। चापेकर बंधुओं के इस कृत्य को क्रांतिकारी गतिविधियों के लिए जागृति का पहला प्रयास माना जा सकता है। जबकि तिलक ने कहा कि आत्म बलिदान का हमारा उद्देश्य प्रशासनिक ढांचे में बदलाव करना नहीं है, बल्कि हमें स्वराज चाहिए। सरकार के जनविरोधी सिद्धांत की हिट लिस्ट में आने के बजाय तिलक का कथन स्वराज मेरा जन्म सिद्ध अधिकार है, भारतीय युवाओं के लिए प्रेरणास्रोत था। दामोदर चापेकर और बाल कृष्ण चापेकर (चापेकर बंधुओं) के मामले के बाद विनायक दामोदर सावरकर की भूमिका को नजर अंदाज नहीं किया जा

सकता। उन्होंने 1900 में नासिक में शमित्र–मेला नामक एक संस्था की स्थापना की। 1904 में पूना में भी इसकी शाखा खोली गई। और इसका नाम बदलकर अभिनव भारत या यंग इंडिया सोसाइटी कर दिया गया। यह सोसाइटी भारत के विभिन्न पश्चिमी भागों में प्रसिद्ध हो गई क्योंकि इसके सदस्य वहाँ पहुँच गए थे। यह समूह 21 दिसंबर, 1909 को नासिक षडयंत्र मामले के लिए जिम्मेदार था, जब नासिक के जिला मजिस्ट्रेट, श्री जैक्सन को सोसाइटी के सदस्यों द्वारा मार दिया गया था। इसे ब्रिटिश अत्याचार के खिलाफ हिंसक क्रांति के एक और कार्य के रूप में लिया जा सकता है। और इसके अलावा इस तरह के समाज अमेरिकी स्वतंत्रता संग्राम, स्वतंत्रता के लिए आयरिश लड़ाई, मैजिनी और गैरीबाल्डी के जीवन और चापेकर प्रकरण से प्रेरणा का परिणाम थे। इसी तरह, 1905–06 में बंगाल में अनुशीलन सोसाइटी की स्थापना की गई थी। इस सोसाइटी के नेता पी. मित्रा और ओ. उस समय के पर्दे पर राजनीति और धर्म का मिश्रण देखा जा सकता है। जैसे नेता अपने धार्मिक उत्सवों को जनता तक राजनीतिक संदेश पहुँचाने के लिए बहुत ही साधन संपन्न तरीके से इस्तेमाल करते थे। जैसे बंगाल के तिलक ने राजनीतिक भाषणों के लिए शिवाजी और गणपति उत्सव का इस्तेमाल किया। वी.डी. सावरकर दुर्गा के महान अनुयायी थे और उन्होंने अंग्रेजों के खिलाफ सशस्त्र क्रांति को प्रेरित किया। अरबिंदो घोष एक और राष्ट्रवादी थे जिन्होंने क्रांतिकारियों का समर्थन किया। उन्होंने अपने प्रसिद्ध बंगाली दैनिक समाचार पत्र बंदे–मातरम में कई प्रेरणादायक निबंध लिखे। उन्होंने स्वतंत्रता के लिए मनुष्य की स्वाभाविक प्यास का समर्थन किया। उन्होंने राष्ट्रवाद के बारे में बताया कि यह एक ऐसा पंथ है जिसके लिए हमें जीना चाहिए। यह शाश्वत है और इसे कभी भी कुचला नहीं जा सकता, क्योंकि यह कोई राजनीतिक या आर्थिक अभ्यास नहीं है, बल्कि एक मानसिक जीवन स्थिति है। अरबिंदो घोष ने बिपेन चंद्र पाल, लाला लाजपत राय और कई अन्य लोगों के साथ मिलकर बाल घोष का समर्थन किया।

गंगाधर तिलक, उनकी साहित्यिक गतिविधियों के लिए। इन नेताओं के समूह ने पुस्तकों, समाचार पत्रों, पत्रिकाओं और व्याख्यानों की मदद से जनता के बीच अपने आचार–विचार का प्रचार किया। जैसे 1857 के युद्ध (भारत का प्रथम स्वतंत्रता संग्राम) के इतिहास पर बी.डी. सावरकर की पुस्तक ने 1907–08 में लंदन में क्रांतिकारियों को सबसे अधिक प्रेरित किया। इसी तरह बंकिमचंद्र चटर्जी ने न केवल अपने साहित्य के साथ, बल्कि अपनी क्रांतिकारी गतिविधियों के साथ भी योगदान दिया। उनके उपन्यास आनंदमठ ने बंगाल के क्रांतिकारियों की मान्यताओं पर गहरा प्रभाव डाला। भावपूर्ण अभिवादन बंदे मातरम बाद में स्वतंत्रता–युद्ध का पवित्र नारा बन गया। दूसरे शब्दों में, महाराष्ट्र और बंगाल भारत माता की अखंड–गरिमा के लिए हिंसक क्रांति की शुरुआत करने के लिए सर्वोच्च मंच बन गए। सावरकर (महाराष्ट्र) और बंकिम चंद्र चटर्जी तथा स्वामी विवेकानंद (बंगाल) ने उस समय युवा क्रांतिकारियों की स्वतंत्र भारत की भावना को पकड़ा, वास्तव में उनके साहित्यिक कार्य युवा मन में आग जलाने के लिए पूर्ण रूप से सिद्ध हुए।[4]

1905 में बंगाल के विभाजन ने क्रांतिकारी कार्यों को फिर से भड़का दिया और अन्य हिंसक कार्यों को जन्म दिया, जिसका आरोप भविष्य में भी लगा। ऐसी प्रशासनिक क्रूरताओं के कारण, लोगों में असंतोष पैदा हुआ और वे विदेशी सरकार की फूट डालो और राज करो की नीति को मानने लगे। विभाजन का यह कार्य वास्तव में राज्य के हिंदुओं और मुसलमानों के बीच एक दीवार खड़ी करने के लिए था। लेकिन 1905 के आरंभ के क्रांतिकारी समूह अस्पृश्यता और जातिवाद पर आधारित नहीं थे, जो अतीत में प्रचलित था। यहां तक कि क्रांतिकारी भी ऐसी डूबती हुई प्रथाओं की धरती पर नहीं बढ़ना चाहते थे। उनके लिए भारत को हिंसक स्रोतों से मुक्त करना एक अंतिम लक्ष्य था और हिंदू दर्शन के विपरीत उन्होंने धार्मिक मूल्यों को केवल ऐसे क्रांति के लिए एक मार्गदर्शक और प्रेरणा के रूप में लिया।

इस प्रकार बंगाल–विभाजन से राजगद्दी में भारी परिवर्तन हुआ। क्रांतिकारियों ने इसके विरुद्ध मोर्चा संभाला। कांग्रेस ने बंगाल विभाजन के विरुद्ध स्वदेशी–आंदोलन चलाया। जबकि जिस मेजर ने आंदोलन पर प्रतिबंध लगाने की कोशिश की, उसे अप्रैल 1908 में बम विस्फोट में उड़ा दिया गया। इस प्रकार, क्रांतिकारियों ने अंग्रेजों के घिनौने कृत्यों के विरुद्ध एक बार फिर अपनी प्रबल शक्ति का परिचय दिया। फिर 27 अप्रैल, 1908 को नालंदा के एक स्कूल में विस्फोट कर दिया गया, क्योंकि ब्रिटिश अधिकारियों ने स्कूल के छात्रों को स्वदेशी–आंदोलन में भाग लेने की अनुमति नहीं दी थी। इसी प्रकार मुजफ्फर नगर के जिला न्यायाधीश श्री डी.एच. किंग्सफोर्ड पर भी बम से हमला किया गया, क्योंकि उन्होंने बहुत से युवकों को पीटने का आदेश दिया था। लेकिन खुदी राम बोस और प्रफुल्ल चक का निशाना चूक गया, क्योंकि उन्होंने

दो निर्दोष महिलाओं पर बम फेंका, जो उस दिन मिस्टर किंसफोर्ड की तरह ही एक ही तरह की गाड़ी में यात्रा कर रही थीं। इस मामले से संबंधित क्रांतिकारी संध्या, युगांतर जैसे समाचार पत्रों और अपने नेताओं के व्याख्यानों से प्रेरित थे।

जब मुजफ्फरपुर बम कांड हुआ, तो ब्रिटिश शासक अपराधियों का पता लगाना चाहते थे।[5] उन्होंने मोनिकटिया उद्यान में अपनी तलाशी शुरू की। जैसा कि दुनिया भर की राजनीतिक घटनाओं से स्पष्ट था कि क्रांतिकारियों और माजिनी और गैरीबाल्डी के पास क्रांतिकारियों के ऐसे प्रभावों के संबंध में कुछ हथियार और गोला–बारूद, विस्फोटक सामग्री और बम बनाने का फार्मूला था। और ऐसी चीजें पुलिस ने अपनी तलाशी में मुजफ्फरपुर नासिक में गणेश सावरकर के घर से मार्च, 1908 में बरामद कीं। जिसके लिए लोकमान्य तिलक ने 22 जून 1908 को केसरी अखबार में एक लेख में उनकी बहादुरी की प्रशंसा की और उनके इस कृत्य को अत्याचार सह रहे भारत के लोगों के लिए न्याय बताते हुए कहा कि इस प्रकार के शहीद व्यक्तिगत रूप से अपराधियों को आतंकित कर व्यवस्था बदलने के लिए मजबूर कर सकते हैं। उस समय के पर्दे पर राजनीति और धर्म का मिश्रण देखा जा सकता है। जैसे नेता अपने धार्मिक उत्सवों को जनता तक राजनीतिक संदेश पहुँचाने के लिए बहुत ही साधन संपन्न तरीके से इस्तेमाल करते थे। जैसे बंगाल के तिलक ने राजनीतिक भाषणों के लिए शिवाजी और गणपति उत्सव का इस्तेमाल किया। वी.डी. सावरकर दुर्गा के महान अनुयायी थे और उन्होंने अंग्रेजों के खिलाफ सशस्त्र क्रांति को प्रेरित किया। अरबिंदो घोष एक और राष्ट्रवादी थे जिन्होंने क्रांतिकारियों का समर्थन किया। उन्होंने अपने प्रसिद्ध बंगाली दैनिक समाचार पत्र बंदे–मातरम में कई प्रेरणादायक निबंध लिखे। उन्होंने स्वतंत्रता के लिए मनुष्य की स्वाभाविक प्यास का समर्थन किया। उन्होंने राष्ट्रवाद के बारे में बताया कि यह एक ऐसा पंथ है जिसके लिए हमें जीना चाहिए। यह शाश्वत है और इसे कभी भी कुचला नहीं जा सकता, क्योंकि यह कोई राजनीतिक या आर्थिक अभ्यास नहीं है, बल्कि एक मानसिक जीवन स्थिति है। अरबिंदो घोष ने बिपेन चंद्र पाल, लाला लाजपत राय और कई अन्य लोगों के साथ मिलकर बाल घोष का समर्थन किया।

भगत सिंह समय गदर पार्टी का सपना सभी लोगों को एकजुट करना था। भारत और अन्य यूरोपीय देशों की तरह एक गणतंत्र–सरकार की स्थापना के लिए ब्रिटिश शासकों को देश से बाहर निकालना। एक अन्य क्रांतिकारी करतार सिंह सराभा भी उच्च अध्ययन के लिए अमेरिका गए और 1914 में भारत लौट आए। ये क्रांतिकारी भारतीय सेना की मदद से हथियारों और विस्फोटकों के साथ काम कर रहे थे। वे सभी उत्तर भारतीय छावनियों में अंग्रेजी सैनिकों पर हमला करने की गुप्त योजना बना रहे थे। लेकिन एक सैनिक द्वारा पिंगली के विरुद्ध विश्वासघात करने के कारण यह कार्रवाई गुप्त नहीं रह सकी और वह मेरठ में एक बक्से में दस बमों के साथ गिरफ्तार हो गया। दूसरी ओर रास बिहारी को इस विश्वासघात की भनक लग गई। दूसरे सिख सैनिक करतार सिंह ने, जो अंग्रेजों का एजेंट था, विद्रोह की तारीख 19 फरवरी, 1915 को ब्रिटिश अधिकारियों को बता दी। इस दिन बहुत से क्रांतिकारी गिरफ्तार हो गए। बनारस षडयंत्र के लिए सचदानंद सान्याल को आजीवन कारावास की सजा सुनाई गई। कृपाल सिंह और पिंगली को गिरफ्तार कर लिया गया और उन्हें सजा मिली।

रास बिहारी भागने में सफल रहे और जापान पहुंच गए, विद्रोह का प्रयास भी क्रांतिकारियों द्वारा विफल कर दिया गया, लेकिन उन्हें एहसास हो गया कि स्थानीय विद्रोहों, भारतीय सैनिकों और शिक्षित युवाओं के एकीकरण के साथ वे विदेशी शासन के खिलाफ लड़ सकते हैं। लेकिन उनके क्रांतिकारी नेताओं ने ब्रिटिश विरोधी विदेशी शक्तियों की मदद लेने की परवाह नहीं की। इसलिए, नेता दूसरे देशों में भाग गए और वहां अपनी गतिविधियां शुरू कर दीं।[6]

1916–1918 के काल में एक स्वतंत्र संगठन मातृवेदी (मातृभूमि के लिए बलिदान का मंच) आगे बढ़ा, इस समाज का मुख्यालय संयुक्त प्रांत के मणिपुरी जिले में था। समाज के प्रमुख गेंदालाल दीक्षित थे। इस दल के चार भाग थे, पहला प्रचार के लिए, दूसरा गुप्तचर सेवाओं के लिए, तीसरा सैन्य मामलों के लिए और चौथा औद्योगिक गतिविधियों के लिए। यह समूह क्रांतिकारी गतिविधियों के लिए आर्थिक मदद के उद्देश्य से अंग्रेजों को लूटता था। वे हथियार, विस्फोटक एकत्र करते थे और मौन–पोस्टर प्रकाशित करते थे। लेकिन जब समूह के कई सदस्य डकैती और हथियार चलाने की गतिविधियों के कारण गिरफ्तार हो गए, तो समूह कमजोर हो गया। इन सभी सदस्यों के खिलाफ मुकदमा मणिपुरी षडयंत्र केस कहलाता है। काकोरी षडयंत्र केस में रामदास बिस्मिल को फांसी की सजा दी गई। काकोरी षडयंत्र केस में मुकुंदी लाल को आजीवन कारावास की सजा सुनाई गई और मणिपुरी केस में उन्हें छह साल की सजा भी हुई, मणिपुरी गतिविधि उत्तर भारत में पहली और एकमात्र षडयंत्र बन गई। इसके बाद 18 फरवरी 1905 को यामजी के वर्मा ने होम

रूल सोसायटी की स्थापना की। जिसके सदस्य बी.डी. सावरकर, लाला हरदयाल, मदनलाल ढींगरा और अन्य थे। जबकि ब्रिटिश प्रेस और राजनेता भारतीय नेताओं और छात्रों की क्रांतिकारी गतिविधियों से चिंतित थे।[7]

निश्कर्श, ब्रिटिश प्रेस का उद्देश्य श्यामजी की गतिविधियों को जब्त करना था जो छात्रों को अधिक प्रभावित कर रहे थे। श्यामजी जो एक और नाम था जो श्यामजी के साथ योगदान दे सकता था और उनकी अनुपस्थिति में सावरकर ने इंडिया हाउस का राजनीतिक नेतृत्व संभाला। इस बीच 1 जुलाई 1909 में लॉर्ड कॉर्जन वायली की मदनलाल ढींगरा ने हत्या कर दी। जिसके लिए भारतीय क्रांतिकारियों ने अलग–अलग प्रतिक्रिया व्यक्त की। उनके कृत्य की निंदा करने के लिए लंदन में एक बैठक आयोजित की गई। आगा खान ने इसकी निंदा की, जबकि बी.डी. सावरकर ने इसका विरोध किया। यामजी ने उनका समर्थन नहीं किया नासिक षडयंत्र मामले में सावरकर को भी गिरफ्तार कर भारत निर्वासित कर दिया गया। उन्होंने फ्रांसीसी क्षेत्र में भागने का असफल प्रयास किया। श्यामजी के भारतीय समाजवादी और मैडम कामा के बनदे मातरम और तलवार की प्रेरणा से, अमेरिका में रहने वाले छात्रों और कामकाजी सदस्यों ने राष्ट्रवादी गतिविधियों को आगे बढ़ाया। युवाओं को प्रेरित करने के लिए भारतीय स्वतंत्र लीग की स्थापना की गई। भारतीय स्वतंत्र लीग जैसे संगठन जल्द ही अमेरिका के अन्य हिस्सों में स्थापित हो गए और पोर्टलैंड के कुछ हिस्सों में सबसे लोकप्रिय थे। 1914 में जब प्रथम विश्व युद्ध शुरू हुआ, तो भारतीय क्रांतिकारियों द्वारा विदेशों में क्रांतिकारी गतिविधियों में बदलाव आया। यह ब्रिटिश शक्तियों के खिलाफ समर्थन के लिए अन्य देशों के साथ जुड़ गया। बर्लिन समिति जिसे बाद में भारतीय स्वतंत्रता समिति के रूप में जाना जाता है, बर्लिन में स्थापित की गई थी। प्रथम विश्व युद्ध में जर्मन अंग्रेजों के खिलाफ थे, इसलिए, भारतीय क्रांतिकारी अंग्रेजी शासन के खिलाफ जर्मन से मदद को संरक्षित करना चाहते थे। यहां तक कि जर्मन भी अंग्रेजों के खिलाफ भारत के साथ गठबंधन करने के लिए समान रूप से इच्छुक थे।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1 पांडा, प्रदीप, बीना अग्रवाल, जनसंख्या परिषद, नई दिल्ली, भारत, और आर्थिक विकास संस्थान, दिल्ली विश्वविद्यालय, भारत वैवाहिक हिंसा, मानव विकास और भारत में महिलाओं की संपत्ति की स्थिति विश्व विकास (2005) पृ. 129.
2 अपर्णा बसु. भारतीय महिला आंदोलन (पीडीएफ) मूल से 27 फरवरी 2013 को संग्रहीत, पृ. 176
3 जी एच आई चौधरी, मैत्रेयी. भारत में नारीवाद (समकालीन भारतीय नारीवाद में मुद्दे) न्यूयॉर्क जेड, 2005. पृ. 245
4 सेन, अमर्त्य. लैंगिक असमानता के अनेक पहलू द न्यू रिपब्लिक .17 सितम्बर 2001 पृष्ठ 39.
5 सिंह, एस. और सिंह, पी. (2011). शोभा डे विखंडित फॉर मेवरिक फेमिनिज्म समकालीन भारतीय महिला उपन्यासकारों में अंग्रेजी में, संपादक इंदु स्वामी, दिल्ली पृष्ठ 14.
6 सावित्रीबाई फुले कौन हैं, उन्होंने भारत में महिलाओं के अधिकारों के लिए क्या किया इंडिया टुडे 3 जनवरी 2016, को संग्रहीत को लिया गया पृ. 12.
7 रमन, सीता अनंथा. भारत में महिलाएँ एक सामाजिक और सांस्कृतिक इतिहास, 2009, पृ. 236.